IJAER/ May-June 2023/Volume-12/Issue-3 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research

प्रो.इच्छाराम द्विवेदी द्वारा रचित"सत्प्रेरणानाटकम्"का युवाओं के प्रति संदेश

विनीता राय
सह आचार्य (संस्कृत)
राजकीय कला महाविद्यालय कोटा
राजस्थान

आधुनिक संस्कृत नाटकों की एक दीर्घ परम्परा में प्रो.इच्छाराम द्विवेदी जी ने नये आयाम प्रस्तुत कियें है जो आधुनिक संन्दर्भों में अत्यधिक प्रासंगिक है। डॉ.इच्छारामद्विवेदीजी द्वारा रचित 'सत्प्रेरणानाटकम्' दृश्यकाव्य विधा में कवि की एकमात्र रचना है, जो कि 15 जनवरी 1994 में देववाणी परिषद् दिल्ली की त्रैमासिक पत्रिका "**अर्वाचीन संस्कृतम्**"में प्रकाशित हुई। द्विवेदी जी ने यह कृति सनातन महाकवि डॉ. रेवाप्रसाद द्विवेदी को समर्पित की है।

यह एक सामाजिक नाटक है इसका कथानक कविकल्पित होते हुए भी अत्यधिक प्रासंगिक है। इस कथानक का उद्देश्य चित्त की शुद्धता का प्रतिपादन करना है।युवक और युवतियों का परस्पर समाकर्षणमूलक रूप सामान्य कथानक को कवि ने अत्यधिक प्रभावपूर्ण रूप से दर्शको के सामने प्रस्तुत किया है जो किआधुनिक सन्दर्भ में अतीव महत्वपूर्ण है। प्रायः समाज मेंयुवक और युवतियों का परस्पर आकर्षण यत्र तत्र सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है। सत्प्रेरणानाटकम्में नाटककार नेतीर्थ-यात्रा के प्रसंग में नायक और नायिका का प्रेमाकर्षण प्राचीन एवं नवीन सभ्यता का एकत्र समाहार प्रस्तुत करता हैआधुनिक परिप्रेक्ष्य में यथार्थ के धरातल पर समसामयिक चिंतन हैं। जिसको प्राचीन भारत की गुरु-शिष्य परम्परा के महत्वपूर्ण संवादों से गुम्फित किया हैं। फलस्वरुप प्रस्तुत नाटक गुरु-शिष्य के प्रगाढ़सम्बन्धों का उद्घाटन करने वाला तथा आधुनिक संदर्भो में अत्यधिक उपयोगी व प्रेरणास्पद हैं। आज से लगभग बीस वर्षो पूर्व रचित ग्रन्थ वर्तमान में सर्वाधिक प्रासांगिक वर्ण्य विषय है। 'अस्ति कश्चिद् वाग्विशेषः' की तर्ज पर "अस्ति किंचिद् वाचिकम्" नामक प्राक्कथन में सर्वप्रथम 'वाग्देवता' का स्तवन करते हुए कवि ने अपनी कृति को देवी सरस्वती के राजहंस के समान बताते हुए 'वाग्देवताया राजहंस इव' संस्कृत विद्वानों को समर्पित किया है।

'सत्प्रेरणानाटकम्' में कवि नेप्राचीन शिक्षा पद्धति तथा भारतीय संस्कृति में प्रचलित गुरु परम्परा के महत्त्व को रेखांकित करते हुए मानव जीवन व शिष्य के व्यक्तित्व के विकास में गुरु की भूमिका तथा गुरूपदेशों की महिमा की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की हैं-

चिकित्सको वेत्ति नरस्य नाडीं,
दैवज्ञ एव च ललाटलेखाम्।
गुरुश्च जानाति समग्रवृत्तिं,
किमस्त्यविज्ञातमिति त्रयाणाम् ।।[1]

अर्थात् चिकित्सकतो मात्र नाड़ी ही देखते हैं और विधाता केवल भाग्यरेखा को ही जानसकते हैं परन्तु एक गुरु ही हैं जो अपने शिष्य के समग्र वृत्ति को जान लेते हैं।

गुरु शिष्य के आत्मिक सम्बन्धों को भी प्रकट किया गया है कि शिष्य किंकर्त्तव्यविमूढ़ होकर पूर्ण विश्वास के साथ कि गुरु उसकी समस्या का अवश्यमेव निवारण करेंगे इसलिए गुरु की शरण में जाता है।

इस नाटक में पांच अंक हैं जिसमें मुख, प्रतिमुख, गर्भ, विमर्श, निर्वहण आदि पाँचों सन्धियों का समुचित निर्वाह हुआ हैं।अभिनेयता की दृष्टि से घटनाओं का अधिक विस्तार नहीं है यद्यपि कथावस्तु कल्पित है किन्तु कवि का भावसंयोजन उत्कृष्ट है। इसीलिए पाठक जब इस नाटक को पढ़ता है तो उसे वास्तविक जीवनगत घटनाओं की अनुभूति होती है।

नाट्य रचना का उद्देश्य आधुनिक युवा पीढ़ी का मार्गदर्शन करना है क्योंकि प्रायः देखा जाता है कि अनुराग रूपी व्याधि से पीड़ित होकर न जाने कितने युवक-युवतियाँ इस जीवन-संग्राम से हतोत्साहित होकर पलायन कर जाते हैं और अपने जीवन की आहूति दे देते है। इस प्रकार की विकट परिस्थितियों में विवश होकर निराशा को प्राप्त युवक युवतियों के लिए नवीन आशा का द्वार उद्घाटित करने की दृष्टि से कवि ने सत्प्रेरणा नाटक की रचना की है एवं नवयुवक व युवतियों को नैराश्यभाव का त्याग करके स्वजीवन को देश के विकास में योगदान देने के लिए प्रेरित किया है। अतः नाटक के शीर्षक की सार्थकता भी सिद्ध होती है।

'सत्प्रेरणानाटक' की कथावस्तु कविकल्पित होते हुए भी अत्यधिक प्रासंगिक है। इस कथानक का उद्देश्य चित्त की शुद्धता का प्रतिपादन करना है।युवक और युवतियों का परस्पर समाकर्षणमूलक रूप सामान्य कथानक आधुनिक सन्दर्भ में अतीव महत्वपूर्ण है। प्रायः समाज मेंयुवक और युवतियों का परस्पर आकर्षण यत्र तत्र सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है। तीर्थ-यात्रा के प्रसंग में नायक और नायिका का प्रेमाकर्षण प्राचीन एवं नवीन सभ्यता का एकत्र समाहार प्रस्तुत करता है।आधुनिक परिप्रेक्ष्य में यथार्थ के धरातल पर समसामयिक चिंतन हैं। जिसको प्राचीन भारत की गुरु-शिष्य परम्परा के महत्वपूर्ण संवादों से गुम्फित किया हैं। फलस्वरुप प्रस्तुत नाटक गुरु-शिष्य के प्रगाढ़सम्बन्धों का उद्घाटन करने वाला तथा आधुनिक संदर्भो में अत्यधिक उपयोगी व प्रेरणास्पद हैं। आज से लगभग बीस वर्षो पूर्व रचित ग्रन्थ वर्तमान में सर्वाधिक प्रासांगिक वर्ण्य विषय है। 'अस्ति कश्चिद् वाग्विशेषः' की तर्ज पर "अस्ति किंचिद् वाचिकम्" नामक प्राक्कथन में सर्वप्रथम 'वाग्देवता' का स्तवन करते हुए कवि ने अपनी कृति को देवी सरस्वती के राजहंस के समान बताते हुए 'वाग्देवताया राजहंस इव' संस्कृत विद्वानों को समर्पित किया है।

सत्प्रेरणानाटकम् के पात्रों कापरिचय-

पाँच अंकों में निबद्ध इस नाटक की नायिका प्रेरणा और नायक कविशेखर है।इस नाटक में कुल सात पुरुष पात्रों में नायक कविशेखर, नायक का सखा वृत्तोदर, सूत्रधार, नट, नायिका के पिता, नायक के गुरु विद्याधर व नायक का सहपाठी रसामृत हैं तथा स्त्री पात्रों में नायिका प्रेरणा, प्रेरणा की प्रथम सखी अपराजिता व प्रेरणा की द्वितीय सखी चंचला है।

संवाद (कथोपकथन) -

संवाद नाटक का प्राण होता है। यह तीन प्रकार का होता है- श्राव्य, अश्राव्य और नियतश्राव्य। जिस बात को पात्र सबके सामने कहता है उसे श्राव्य कथन कहते हैं, जो बात वह स्वयं से कहता है उसे अश्राव्य कथन कहते हैं और जो बात कुछ के सुनने योग्य हो और अन्य के नहीं उसे नियतश्राव्य कथन कहते हैं। उत्तम कथोपकथन की एक कसौटी यह भी होती है कि यह कथानक (कथावस्तु) के विकास में सहायक होता है। द्विवेदी जी ने यथास्थान सभी प्रकार के संवादों का प्रयोग किया है।यथा-

(इतस्ततः पर्यटन् पौनःपुन्येन घटीयन्त्रं चावलोक्य)कथमधुनापि नागता?

- (आत्मगतम्) किं करोमि (प्रकाशम्)आधुनिका सेवका अपि नाम निष्कर्मिणो वर्तन्ते । अस्माभिः प्रेषितः स नटोऽपि नागतः सूचनार्थं तर्हि स्वयमेव गच्छामि तामन्वेष्टुम् ।

- (मन्दस्मितं कृत्वा) यदत्रभवता सम्भ्रमवशात्कथितं तन्मन्ये शिवानुज्ञातमेद।

- (अपवार्य) ह्यः सायंकालादेव तं कविवरेण्यं दृष्ट्वा संजातैवं विधेति मन्ये। अस्तु तावदिमामेव पृच्छामि ।

-(प्रकाशम्) हला। कथय किमर्थमायासितासि? रात्रावपि न त्वया गृहीतं निकाममशनं न वा सुखेन शयितं तत्कि कारणम्?

-(जनान्तिकम्) ईदृशी दशा कदा भवति हला? चंचला -श्रूयते कोऽपि प्रीतिव्याधिः गाथासु यस्मिन्नीदृशान्येव लक्षणानि प्रादुर्भवन्ति ।

- प्रेरणा- (अपवार्यन्ती) आर्य! आर्यपुत्र! रक्ष! रक्ष विनयम् !

कवि०-किमविनीतं मया शुभे! (नेपथ्यात्) "रसामृत! रसामृत! क्वासि ? शीघ्रमेव स्वमित्रं कविशेखरं पुर्वी प्रेरणाञ्च मत्सकाशमानय"

'सत्प्रेरणानाटकम्' में रसनिरूपण-

नाटक की भूमिका में नाटक का संक्षिप्त परिचय देते हुए नाटककार ने स्वयं बताया है कि इस नाटक में मुख्य रस श्रृंगार है तथा प्रसंगानुरुप यथास्थान अन्य रसों का भी प्रयोग हुआ है, वस्तुतः सभी भावो में 'रति' का स्थान सर्वोच्च है यह प्रवृत्ति इतनी बलीयसी है कि देव और तपस्वीजन भी अछूते नहीं रहे। भरतमुनि ने भी नाट्यशास्त्र में श्रृंगार को प्रथम स्थान दिया है। कामसूत्र के प्रणेता वाचस्पति गैरोला 'रति' और 'प्रेम' शब्द की व्याख्या करते हुए लिखते है कि शरीर प्रधान भाव प्रेम एक सम्मोहन है। प्रेम तत्त्व अन्य सभी भावों का सम्राट होता है। अतः कवि ने आधुनिक युवक युवतियों को सद्प्रेरणा हेतु श्रृंगार का ही चयन किया है।

नाटक के उद्देश्य-

पाश्चात्य समालोचक नाटक केउद्देश्य तत्त्वों पर विशेष बल देते हैं। उनका स्पष्टीकरण है कि नाटककार पौराणिक या ऐतिहासिक घटनाओं का वर्णन के उद्देश्य से नाटक नहीं लिखते अपितु इसके माध्यम से कुछ मूल्यों व आदर्शोंको प्रस्तुत करने हेतु लिखते हैं। साथ ही नाटक से मनोरंजन के साथ-साथ सर्वसाधारण को कोई न कोई संदेश भी दिया जाता है, मानव-जीवन की विभिन्न परिस्थितियों एवं विभिन्न मानसिक अवस्थाओं से अवगत किया जाता है और छात्रों को प्रभावशाली व शुद्ध वार्तालाप की शिक्षा प्रदान की जाती है।कवि द्विवेदी तीर्थाटन व्यसनी होने के कारण विभिन्न तीर्थो का अद्भुत वर्णन करते है। 'सत्प्रेरणानाटकम्' के अनुशीलन से सहृदय पाठकों को तत्तत् तीर्थो का मनोहारी वर्णन उपलब्ध होता है। त्रिभुवनगुरु तोटकेश्वर की स्फटिक मूर्ति के दर्शनार्थ नायक व नायिका आते हैं। इससे एक बात और स्पष्ट होती है कि कवि ने भारतीय युवाओं को तीर्थप्रेमी तथा भारतीय संस्कृति में अभिरूचि लेने वाला बताया है।

नायक-नायिका के परस्पर अनुरागबद्ध होने पर भी मर्यादाहीन व्यवहार व आचरण करते हुए चित्रित नहीं किया गया और न ही बिना गुरु की आज्ञा के निर्णय लेते हुए दिखाया। इस प्रकार नायक कार ने नायक-नायिका के चरित्र की संरक्षा की है जबकि अभिज्ञानशाकुंतलम् में कविकुलगुरु कालिदास ने परस्परानुराग आबद्ध किया।

नायक-नायिका का गन्धर्व विवाह दिखाया है। यद्यपि महाकवि कालिदास का लक्ष्य भी सकारात्मक ही था कि उन्होंने नकारात्मक परिणाम दर्शाते हुए युवाओं में सकारात्मक संदेश दिया है कि अपने गुरुजनों को बिना बतायें निर्णय लेने से क्या क्या हानियाँ होती है तथा क्या क्या दुःख सहने पड़ते हैं।अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए नाटककार ने बड़े ही रूप से नाटक की कथा वस्तु को पाँच अंकों में पिरोया है जिसके अनुसार कथासार इस प्रकार हैं-

सत्प्रेरणा नाटक कीसंक्षिप्त कथावस्तु -

प्रथमांक-

द्विवेदी जी ने सत्प्रेरणानाटक में नाट्यशास्त्रीय परम्परा का अनुसरण करते हुए सर्वप्रथम नान्दी पाठ के दो पद्यों के माध्यम से आशीर्वादात्मक मंगलाचरण का प्रयोग किया है जिसमें शार्दूलविक्रीडितम् छन्द में निबद्ध प्रथम पद्य में पार्वतीपति शिवशम्भू, त्र्यम्बक शिव एवं द्वितीय पद्य में वाग्देवता की स्तुति की गयी है। यहाँ कवि ने पत्रावली नान्दी का प्रयोग किया है-

वासन्ते समयेऽबलाबलधरं धीरत्वध्विंसकं,
चण्डजवालहुताशनै रतिपतिं क्षारं क्षणे नीतवान्।
पश्चाच्छैलसुताकटाक्षविनतो रागारुणः कारुणः,
प्रेमानन्दपरश्शिवश्शशिनि भश्शान्तश्शिवायास्तु वः।।[2]

अपि च

या त्रैगुण्यसुता सदंकभवने संलालिता भावुकैः,
भावोल्लासविवर्द्धिनी सुखकरी लोकाजिरे राजते।
क्रीडन्ती कविवैखरीशुकरवैर्वाग्देवतादेशतः,
प्रीत्यै सास्तु सतामियं गुणमयी सत्प्रेरणा सर्वदा।।[3]

तत्पश्चात् सूत्रधार का प्रवेश और शिव मन्दिर में पूजा करती हुई नायिका के प्रवेश के साथ ही उसकी सखियाँ चंचला और अपराजिता का प्रवेश तथा नायिका का वामाक्षि स्पंदन होता है जिसका तात्पर्य उत्तम वर की प्राप्ति होना है-

कवि ने समासोक्ति अलंकार का मनोहारीप्रयोग किया है-प्रस्तुत अंक में प्रदोष वेला में कलरव करते हुए पक्षियों की तुलना नायिका केनुपूरों से की है-

कूजद्विहंगमनूपुरनिक्वाणझंकृता नायिकेव द्रुतमायाति प्रदोषवेला।[4]

इतने में ही नेपथ्य में से आवाज आती है। नायक की इस आवाज को सुनकर नायिका कहती है कि मेघ की गर्जना के समान गंभीर ये किसकी ध्वनि है ? यह आवाज मैंने पहली बार सुनी है, मंदिर में जाकर देखती है तो प्रेरणा को नायक कामदेव के समान अत्यंत आकर्षक दिखाई देता है और वह मनोरथ पूर्ण करते हेतु मन में प्रार्थना करती है। नायक पूजा के लिए पुष्प मांगने हेतु अपने मित्र के सामनेहाथ प्रसारित कर देता हैकिन्तु मित्र की अनुपस्थिति में नायिका उसके हाथ में पुष्प रख देती है औरनायक नायिका के हाथ को अपने मित्र का हाथ समझ कर नायिका के हाथ को ही पकड़कर बाहर आताहै।प्रकाश में आते ही ‘मेरी बुद्धि व्याकुल हो गयी’ ऐसा कहकर नायक नायिका से क्षमा मांगता है। यहाँ उनमें प्रेमांकुरण हो जाता है अर्थात् नायक इसे पाणिग्रहण की प्रक्रिया भी बताता हैऔर नायिका की सखियाँ कहती हैं कि आप तो गंभीर होकर कांपने लग गयी, हमने तो इसे शिवजी की कृपा मान लिया। इस अंककी समाप्ति सिंह के आने से होती है जो कि ‘अभिज्ञानशाकुन्तलम्’ केप्रथमांक के हाथी के प्रसंग के सदृश ही प्रतीत होता है-

प्रदोषव्रतक्षुधितेन सघनकाननिर्गतेन
मृगेन्द्रेण पारणक्रमे ऽस्माकं भक्षणं करिष्यते।[5]

द्वितीयांक -

इस अंक में कुल इक्कीस पद्य हैं जो कि सभी अंको में सर्वाधिक है। इसमें नायक नायिका की कामावस्था का विस्तृत चित्रण है। अनुराग एक ऐसी व्याधि है जिसका निदान व औषधि दोनों ही रोगोत्पादक है। प्रीति व्यापार वाली विपत्ति, सभी जाति, धर्मो को मिटाने वाली, धीरता को समाप्त करने वाली इत्यादि इस रोग को नाम दियें हैं। इस प्रसंग में बाणभट्ट व अम्बिकादत्त व्यास का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है तथा समासयुक्त पदावली का प्रयोग हुआ है। इस कथानक के माध्यम से कवि आधुनिक युवक-युवतियों को समझाना चाहते हैं कि अपने प्राणों की बलि न देकर समस्या का समाधान करें।

तृतीयांक-

अभिज्ञानशाकुन्तलम् के तृतीय अंक के समान ही इसमें नायिका की सखियाँ तथा नायक के मित्र के द्वारा नायक-नायिका के कामावस्था का विस्तार से वर्णन किया है। अपराजिता के शब्दों में-

अपराजिता-**(प्रविश्य) कीदृशीयं विपत्तिरागता? हिमालयस्य शैत्यमनुभवि शान्त्यर्थं तथा च भगवतो बदरीशस्य दर्शनार्थं कृतायामस्य यात्रायां वह्निव्यापारो लब्धः प्रियसख्या।**

अर्थात् ये कैसी विपत्ति उपस्थिति हो गयी है हिमालय की शीतलता का अनुभव करके शांति प्राप्ति के लिए तथा बदरीनाथ के दर्शन के लिए प्रायोजित यात्रा में वह्निव्यापार(प्रेमाग्नि) प्राप्त हो गयी है।तीन दिन से सखी न सोयी, न ही उसने कुछ खाया। केवल कविश्रेष्ठ कविशेखर(नायक) का चिन्तन करते हुए शून्य में देख रही है। सखि मृतप्राय हो गयी है-**सः हिमाद्रौ तादृशमनुरागवह्निमपि जनयतियस्य परिता प्रियसखी मे मृतप्रायाऽऽस्ते।**[6]

वहीं नायक का मित्र वृत्तोदर भी नायक की प्रमत्तावस्था का वर्णन करते हुए कहता है-

अतःएवात्रागत्य कापि प्रेरणा नाम्नी वह्निशिखा आसादिता।तस्याः प्रतीक्षायामेव आदिवसत्रयमत्रैव परिक्रमतेऽसौ लुब्धभल्लूक इव।[7]

तत्पश्चात् एक वृद्ध पुरुष कविशेखर को दिखाई देते हैं जो कि वस्तुतः नायिका के पिता है तथा वे कविशेखर को सिद्ध आचार्यप्रवर समझकर अपनी कन्या की जन्मपत्रिका देखने को कहते हैं तथा उसकी अस्वस्थ स्थिति से अवगत कराते हुए कहते हैं, ‘मेरे पुत्री के विवाह के लिए सारी तैयारियाँ हो चुकी थी, किन्तु तीन दिन से वह अस्वस्थ है’, तब पत्रिका देखकर कविशेखर ग्रहों की कुटिलता के विषय में बताते हैं तथा ग्रहों की विपरीत स्थिति की शान्ति हेतु शिव की आराधना का उपाय बताते हैं। तभी नायिका की सखी चंचला नायक को खोजती हुई वहाँ आती है और नायिका के पिता के वहाँ से चले जाने पर कविशेखर को नायिका की विषण्ण दशा से अवगत कराती है एवं नायक से प्रार्थना करती

है किवह शीघ्रताशीघ्र नायिका से जाकर मिले।तभी नायिका अपनी द्वितीय सखी अपराजिता से इस प्रकार कहती है-

नेत्रे निमील्य परिकल्प्य च चित्तयोगात्,
हृत्स्थं प्रियं मुहुरहन्तु समर्चयामि।
मुक्ताफलाश्रुमणिखण्डवतीमिमां मे
मालां प्रियाय विरचय्य समर्पयामि।।[8]

जिसका श्रवण नायक भी कर लेता है फिर नायक कहता है-

येनासि घोरविषमे विनिपातिता स्वं
प्रीतिव्यथाज्वरदवाग्निसुतापता।
अस्मै प्रिये! त्वदपराधिन इच्छया त्वं
दण्डं विधेहि निभृतं तव बहुपाशैः।।[9]

तभी नायिका प्रेरणा के पिता शिव आराधना के लिए पूजा की सामग्री लेकर उपस्थित हो जाते हैं तथा नायक कविशेखर विपरीत ग्रहों की शांति हेतु शिवस्तुति करके वहां से चले जाते हैं।

चतुर्थ अङ्क-

कवि ने गुरु की महिमा का वर्णन करते हुए कहा हैं-

जगति विहगपंङ्क्त्या प्रीतिरीत्या निजाण्डं
निजचरणतलस्थं रक्ष्यते नित्यमेव।
गुरुचरणकृपाया जीवनेऽस्मिंस्तथैव
शरणमुपगतानां नो भयं क्वापि लोके।।[10]

जैसेः अभिज्ञानशाकुन्तल में योगबल से गन्धर्व विवाह का ज्ञान हो गया था उसी प्रकार इस नाटक में भी कविशेखर के गुरु को अपनी तपस्या के बल से नायक नायिका की प्रेमव्याधि के विषय में ज्ञात हो जाता हैं।इस अंक में नाटककार ने प्राचीन शिक्षापद्धति तथा भारतीय संस्कृति में प्रचलित गुरु-शिष्यपरम्परा के महत्त्व को रेखांकित करते हुए मानव जीवन व शिष्य के व्यक्तित्व के विकास में गुरु की भूमिका तथा गुरूपदेशों की महिमा की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की हैं।

चिकित्सको वेत्ति नरस्य नाडीं,
दैवज्ञ एव च ललाटलेखाम्।
गुरुश्च जानाति समग्रवृत्तिं,
किमस्त्यविज्ञातमिति त्रयाणाम्।।[11]

गुरु-शिष्य के आत्मिक सम्बन्धों को भी प्रकट कियाहै कि शिष्य किंकर्त्तव्यविमूढ़ होकर पूर्ण विश्वास के साथ गुरु की शरण में जाता है कि गुरु उसकी समस्या का अवश्यमेव निवारण करेंगे।

सदियों से चली आ रहीप्रेमरोग रुप एक स्वाभाविक समस्या के समाधानार्थ ऐसे कथ्य का चयन किया है।युवक-युवतियों में सहज पल्लवित होने वाले प्रेम के परिणाम स्वरूप साहस अथवा निराशा के कारण प्राणों की आहुति देने के स्थान पर उस प्रेमांकुर को प्रेरणा स्वरूप आदर्श बनाकर स्व उन्नति के मार्ग को अपनाने (आत्मसात्) करने की प्रेरणा दी है।

भूत-भविष्य-वर्तमान सभी कालों के लिए प्रासंगिक विषय पर कवि ने अपनी लेखनी को कृतार्थ किया है। युवावस्था के स्वभावज गुण-दोषों का वर्णन बाणभट्ट ने 'शुकनासोपदेश' के माध्यम से विस्तारपूर्वक वर्णन किया है कि युवावस्था में प्रेमोद्रेक के कारण युवक युवतियाँ कुछ ऐसे निर्णय ले लेते हैं जिससे उनका भविष्य अंधकारमय हो जाता हैं तथा अपेक्षित अभीप्सित उन्नति व प्रगति नहीं हो पाती औरमोहपाश में बंधकर वह किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाते हैं किंतु प्रणवसंत द्विवेदीजी ने अपने नाटक के माध्यम से युवापीढ़ी का मार्गदर्शन करते हुए गुरु की महिमा का वर्णन किया है। ऐसा लगता है कि महाकवि बाण भट्ट के द्वारा दिए गए उपदेश काउत्तरार्द्धप्रस्तुत किया है कि युवावस्था के दुर्घर्षदोषों का किस प्रकार समाधान किया जा सकता है।

कवि ने नायक-नायिका को भौतिक स्वार्थ को त्याग करविवाह न करने के सन्दर्भ में यह संदेश दिया है कि नायक तो शारदा को पत्नी के रूप में तथा नायिका कृष्ण को पति रूप में मानकर उनकी अर्चना करें। द्विवेदीजी ने इस अंक के माध्यम से अवगत किया कि जीवन में जब भी किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो तो गुरु की शरण में जाना चाहिए, क्योंकि गुरु अपने शिष्य के हित-अहित को भली भांति जानते हैं।

स्निग्धे सदा गुरुजनेऽपि तदग्रभागे
तेष्वादरेण हृदयंपरिवेपते मे।
किं वक्ष्यतीति विकलीकृतचित्तवृत्त्या-
युक्तोऽधुना भययुतोऽस्मि सखि क्षणेऽस्मिन्।।[12]

कविशेखर (नायक) चिन्तामणि मन्त्र का जप करते हुए शारदा माता की प्रतिमा के समक्ष याचना करता हुआ स्थित हैं- **हे जगदम्ब! किं करोमि? क्व यामि? (निःश्वस्य) कथं मां वीक्ष्य हसन्तीव प्रतिभासि?**

क्रीडास्ति लोकरचना जननि! त्वदीया,
नूनं त्वयैव रचितो भुवि रागपाशः।
मां व्याकुलं समभिवीक्ष्य विचेष्टमानं
तेनैव तत्त्वमसि देवि मुदा हसन्ती।।[13]

और तभी कवि का मित्र रसामृत नायक की मनः स्थिति को जानने हेतु प्रश्न तथा प्रतिप्रश्न करता है एवं नायक अपने मित्र को वास्तविक स्थिति से अवगत कराना नहीं चाहता, किन्तु रसामृत कविशेखर को स्वीकारोक्ति के लिए विवश कर देता हैं-कथमज्ञानीव मां पृच्छसि?

क्षिप्त्वा त्वं स्वयमेव यत्नसहितं रागाब्धिगर्ते सखे!
यस्याः पेशलचित्तम्न्दरगिरिं प्रेमामृतं वांछसि।
सा क्लिश्यत्यनिशं वियोगविषमज्वालावलीढाऽऽश्रमे,
नव्यैव प्रतिभाति मे गिरिसुता घोरं चरन्ती तपः।।[14]

तुमने स्वयं ही यत्नपूर्वक राग रूपी सागर के गर्त में उसको फेंककर उसके कोमल चित्त रूपी मंदराचल से प्रेम रूपी अमृत की इच्छा कर रहे हो। वह रात-दिन वियोग की विषम ज्वाला से युक्त होकर आश्रम में मानों कोई दूसरी गिरिसुता (पार्वती) घोर तप कर रही है। यहां कवि ने नायिका की तुलना शङ्कर को पति रूप में प्राप्त कर रही तप करने वाले पार्वती से की हैं।

रसामृत की ये बात सुनकर नायक सभी वृत्तान्त से अवगत होने की बात स्वीकार करता है तथा गुरु की आज्ञा से साधना रूपी अग्नि में जीवन के तपने की बात कहता है कि विष्कम्भक के माध्यम से कचि ने भूत एवं भविष्य में होने वाली घटनाओं का विवरण दिया है। पंचम अंक के प्रारम्भ में नायक के मित्र रसामृत के द्वारा समस्त वृत्तान्त कहा गया कि गुरु की महानुभावता विलक्षण हैं उनका तप भी लोकोत्तर है तथा गुरु की शिष्य वत्सलता (शिष्य के प्रति प्रेम एवं अपनत्व) असाधारण है। रसामृत ने बताया कि गुरु को समाधिस्थ होते हुए एक सप्ताह व्यतीत हो गया, जो कि मित्र कविशेखर तथा उसके प्रियतमा प्रेरणा के समाधानार्थ गुरुजी तप कर रहे थे। वे दोनों भी अपने-अपने कक्ष में मौन धारण करके जप कर रहे थे। आश्रम में गुरु की संकल्प शक्ति का प्रभाव सर्वत्र परिलक्षित हो रहा है-

"वृक्षाः पुष्पचयं स्वयं मुनिजनेभ्योऽद्यार्पयन्ति स्वयम्
भिक्षापात्रमपि द्रुमैर्मधुमयैः पक्वैः फलैः पूर्यते।
शाखास्वत्र परस्परं द्विजकुलं शान्त्यैव नीवारकं
दत्वा चंचुपुटे प्रसन्नमनसा स्निग्धं जनं पश्यति।।[15]

अर्थात् वृक्ष स्वयं पुष्पों को मुनिजनों को अर्पित कर रहे हैं। वृक्षों के द्वारा भिक्षापात्र भी पके हुए स्वादु मधुर फलों से पूरित किया जा रहा है। शाखाओं पर पक्षीगण शांतिपूर्वक नीवारधान को परस्पर एक दूसरे चंचुपुट में देकर प्रसन्नचित्त दिखायी दे रहे हैं। इस प्रकार सर्वत्र गुरु की संकल्प शक्ति का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित हो रहा है। संतप्त स्वर्ण में ही अलङ्कार संयोजन की योग्यता आती है-

सखे! जानेऽहं सर्वं किन्तु सन्तप्ते
सुवर्ण एव भवति योग्यताऽलंकारसंघटनस्यपश्य-
विषमदहनवह्निज्वालया ज्वालितं यद्
तदिह कलुषशून्यं शोधितं स्यात्सुवर्णम्।
प्रभवति वनितानां भूषणं प्रीतिपात्रं
जगति भवति दुःखानन्तरं हर्षराशिः।।[16]

इतना कहने पर ही तभी नेपथ्य से गुरु के आह्वान को सुनकर दोनो मित्र गुरु के पास जाने के लिए निकल जाते हैं। गुरु विद्याधर माँ शारदा की आराधना करते हुए कहते हैं-

हे जगन्माता! कृपालु तुम्हारे प्रभाव से ही ये सम्पूर्ण संसार अनुरागबद्ध होता हैं और ये आपका स्नेह पास सभी प्राणियों को बांध देता है। आपकी लीला अपरम्पार है। हे माता ! यह अनुरागव्याधि दुर्निवारणीय है। इसकी प्रशमन आपके प्रभाव से ही होगाअतः करूणा कीजिए-

अयि! जगद्धात्रि! कृपामयि! तवैव प्रभावेणबद्धानुरागमिदं जगज्जायते। तवैव स्नेहमयः पाश आबध्नाति जनान्सर्वान्। सर्वथा दुर्निवारा ते लीला। मातः!दुर्वारोऽयमनुरागव्याधिः प्रशमो ह्यस्य तवानुभावता।[17]

यावन्नो तव पादपंकजरजः प्राप्नोति सत्कर्मतः,
यावन्नो शिवभावनाम्बुधिजले प्रक्षालितं जायते।
यावन्नो विमलानुरागकुसुमैस्त्वामर्चति श्रद्धया,
तावन्नो मनुजस्य जीवनमिदं साफल्यमारोहति।।[18]
मातः कारुण्यमूर्त्ते! परमशिवतमे! कीदृशी तेऽनुकम्पा,
सुस्नाता यत्र लोकाः प्रतिपलममलाः पूर्णकामा भवन्ति।
त्वं धात्री विश्वगोलं मधुररसमयै स्वैः पयोभिः पुनासि,
को वा शक्तो जगत्यां सकलसुखमयीं ते कृपां संविहातुम्।।[19]

तत्पश्चात् रसामृत, कविशेखर एवं प्रेरणा गुरु को प्रणाम करतेहैं। गुरु सभी को आशीर्वाद देकर अम्बादेवी द्वारा प्रदत्त समाधान को कहतेहैं। कविशेखर तथा प्रेरणा समाधान को सुनने के लिए दत्तचित्त हो जाते हैं। गुरु रसामृत को काष्ठफलक के वस्त्रावरण को हटाने के लिए आज्ञा देते हैं। काष्ठफलक के अनावरण होने पर कविशेखर प्रेरणा को शारदा रूप में चित्रित देख विस्मित हो जाता है।

गुरु कविशेखर से कहते हैंकि यहीं तुम्हारी सत्प्रेरणा है और वीणापाणि शारदा माँ इस मूर्ति के माध्यम से तुम्हें कवि कर्म के लिए प्रेरित करेगी तथा माँ शारदा की कृपा से तुम कीर्तिवर्धक विभिन्न काव्यकृतियों की रचना करोगे।यह कहकर चित्र कविशेखर को दे देतेहैं तथा रसामृत को पुनः दूसरे चित्र के वस्त्रावरण को हटाने का आदेश देते हैं। जिसमें कविशेखर को श्रीकृष्ण के रूप में बाँसुरी बजाते हुए दिखाया है। प्रेरणा उस चित्र को सतृष्ण होकर देखती है तो गुरु विद्याधर कहते हैं कि ये तुम्हारे लिए पूज्य हैं। ये तुम्हारे प्रियतम हैं, अन्तर्यामी हैं, तुम्हारे हृदयरूपी आकाश में सदा इनका निवास है तथा तुम अपने जीवन में श्रीकृष्ण की भक्ति करो एवं कविशेखर शारदा की आराधना करें। इस जन्म में की गयी भक्ति आगे आने वाले जन्म तुम्हारा अखण्ड मिलन करायेगी। इस जन्म में लोक कल्याण के लिए तुम्हारा जीवन समर्पित रहेगा।इस प्रकार महाकवि द्विवेदी जी ने इस नाटक के माध्यम से युवाओं की प्रेमरोग नामक व्याधि से निजात पाने का युक्तियुक्त उपाय बताते हुई भटकती हुई युवा पीढ़ी का मार्ग निर्देशन किया हैजो कि युवाओं की सर्वप्रमुख समस्या या वेदना होती हैं।प्रायः देखा जाता है कियुवावस्था में छात्र-छात्राएँ परस्पर आकर्षण के वशीभूत होकर अपने जीवन को व्यर्थ गवां देते हैं।

संदर्भग्रन्थ सूची–

1. सत्प्रेरणानाटकम्, चतुर्थांक, पद्य सं.7 पृ.सं. 30
2. सत्प्रेरणानाटकम्, प्रथमांक, पद्य सं.1 , पृ.सं. 1
3. सत्प्रेरणानाटकम्, प्रथमांक, पद्य सं.2 , पृ.सं. 1
4. सत्प्रेरणानाटकम्, प्रथमांक, पृ.सं. 3
5. सत्प्रेरणानाटकम्, प्रथमांक, पृ.सं. 7
6. सत्प्रेरणानाटकम्, तृतीयांक, पृ.सं. 20
7. सत्प्रेरणानाटकम्, तृतीयांक, पृ.सं. 23
8. सत्प्रेरणानाटकम्, तृतीयांक, पद्य सं. 7, पृ.सं. 25
9. सत्प्रेरणानाटकम्, तृतीयांक, पद्य सं. 8, पृ.सं. 26
10. सत्प्रेरणानाटकम्, चतुर्थांक, पद्य सं. 3, पृ.सं. 28
11. सत्प्रेरणानाटकम्, चतुर्थांक, पद्य सं.7 पृ.सं. 30
12. सत्प्रेरणानाटकम्, पंचमांक, पद्य सं.13 पृ.सं. 43
13. सत्प्रेरणानाटकम्, पंचमांक, पद्य सं. 5 पृ.सं. 39
14. सत्प्रेरणानाटकम्, पंचमांक, पद्य सं.8 पृ.सं. 41
15. सत्प्रेरणानाटकम्, पंचमांक, पद्य सं.2पृ.सं. 38
16. सत्प्रेरणानाटकम्, पंचमांक, पद्य सं.10पृ.सं. 41
17. सत्प्रेरणानाटकम्, पंचमांक, पृ.सं. 42
18. सत्प्रेरणानाटकम्, पंचमांक, पद्य सं.11पृ.सं. 42
19. सत्प्रेरणानाटकम्, पंचमांक, पद्य सं.12 पृ.सं.43